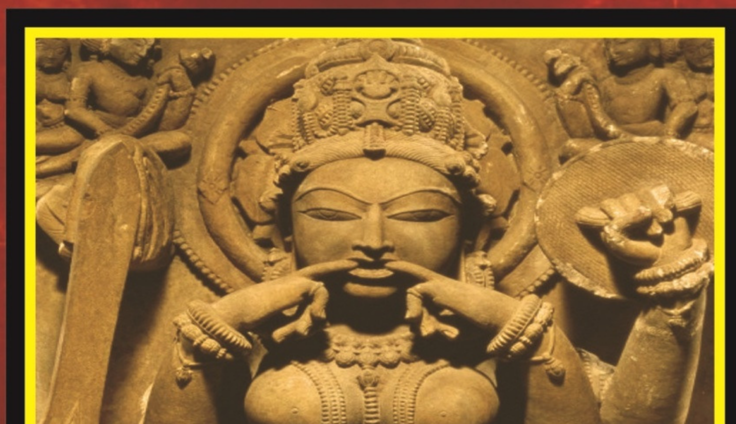
आगम-रहस्य

(तन्त्रोक्त-साधनाएँ)



योगेश्वरानन्द एवं सुमित गिरधरवाल

आस्था प्रकाशन मन्दिर

॥ ह्रीं ॥

आगम-रहस्य

(तन्त्रोक्त-साधनाएं)

यत्रास्ति भोगो नहि तत्र मोक्षो
यत्रास्ति मोक्षो नहि तत्र भोगः।
श्री सुन्दरी-साधन तत्पराणां
भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव॥

जहां भोग है, वहां मोक्ष नहीं और जहां मोक्ष है, वहां भोग नहीं। परन्तु श्री त्रिपुर सुन्दरी-साधकों के लिए भोग और मोक्ष यहीं पर उपलब्ध हैं।

लेखक एवं संकलयिता
योगेश्वरानन्द एवं सुमित गिरधरवाल

प्रकाशक

आस्था प्रकाशन मन्दिर

बागपत॥

श्री बगलामुखी देव्यै नमः ॥

दो शब्द

तन्त्र शास्त्र को मुख्यतः दो वर्गों में बांटा गया है– आगम और निगम। इसके अतिरिक्त बहुसंख्यक तन्त्र-ग्रन्थ डामर, यामल, उड्डीस आदि नामों की श्रेणियों में भी विभक्त है और उपतन्त्रों की भी उसी प्रकार एक बड़ी संख्या है। कहने का तात्पर्य यह है कि तन्त्र ग्रन्थों का अलग ही एक बड़ा विपुल भण्डार है, परन्तु अधिकांश ग्रन्थ समय-चक्र के कारण विलुप्त हो गए हैं। लेकिन तो भी जो ग्रन्थ उपलब्ध हैं, वे इस धर्म-ग्लानि के काल में भी 'तन्त्र' या 'आगम' का गौरव अक्षुण बनाए रखने के लिए पर्याप्त हैं।

'आगम' शब्द का अर्थ है– **आगच्छति बुद्धिमारोहति यस्मादभ्युदयनिः श्रेयसोपायः स आगमः**। अर्थात्, जिसके द्वारा इहलौकिक और पारलौकिक कल्याणकारी उपायों का वास्तविक ज्ञान हो वह 'आगम' शब्द से निरूपित होता है। वेदान्त का सिद्धान्त है कि **"जीवो ब्रह्मैव नापरः"** "जीव ही ब्रह्म है, दूसरा नहीं।" उसी प्रकार तन्त्र-आगमों का सिद्धान्त है– **"आनन्दं ब्रह्मणो रूपम्"** "आनन्द ही ब्रह्म का रूप है।" इसी प्रकार अनेकों श्रुतियां भी इसी आगम-सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है। वेदान्त के समान ही तन्त्र-आगमों के भी दार्शनिक सिद्धान्त हैं। वेदों में परमेश्वर परब्रह्म के रूप में हैं। वहां पूर्ण ब्रह्म कहते हैं **"एकोऽहं बहुस्याम"**– मैं अकेला हूं, बहुत हो जाऊं। तन्त्र-आगम में ब्रह्म को शिव नाम से जाना जाता हे। सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् भगवान परमशिव स्वयं संसाररूपी क्रीड़ा करने के लिए अपनी शक्ति को संकुचित करके मनुष्य-शरीर का आश्रयण करते हैं– **"मनुष्यदेहमाश्रित्य छन्नास्ते परमेश्वराः"**।

तन्त्र-ग्रन्थ संवाद रूप में हैं, जिनमें वक्ता का स्थान स्वयं 'शिव' ने और श्रोता का स्थान 'पार्वती' ने ग्रहण किया है उन्हें 'आगम' कहा जाता है और जिनमें वक्ता का स्थान 'पार्वती' ने और श्रोता का स्थान 'शिव' ने ग्रहण किया है, उन्हें 'निगम' कहा जाता है।

तन्त्र-अनुयायी 'आगम-निगम' और 'डामर-यामल' की श्रेणी वाले ग्रन्थों को "ईश-वाक्य" मानते हैं और वेदों के समान उन्हें पवित्र और पूज्य मानते हैं। तन्त्र शास्त्रों की महत्ता का वर्णन करते हुए **'महानिर्वाण तन्त्र'** घोषणा करता है कि "कलि-दोष के कारण 'द्विज' लोग पवित्र-अवित्र का विचार नहीं करेंगे। अतएव वे 'वैदिक' कृत्यों द्वारा 'मुक्ति-लाभ' करने में समर्थ नहीं होंगे।" ऐसी स्थिति में 'स्मृतियां' और 'संहिताएं' मनुष्य जाति को कल्याण की ओर नहीं ले जा सकेंगी। हे प्रिये! मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि "कलिकाल में 'आगम-सम्मत' धर्म को छोड़कर दूसरा मार्ग ही नहीं है।"

वस्तुतः तन्त्र शास्त्र सार्वजनिक और सार्वदेशिक शास्त्र है। उसमें ''शैवों', 'वैष्णवों', 'शाक्तों' आदि भिन्न-भिन्न सम्प्रदाओं की अलग-अलग उपासना-विधियों का वर्णन है और यह 'अपौरुषेय' शास्त्र सम्पूर्ण आस्तिक समाज पर आज भी अपना विशिष्ट प्रभाव रखता है।

'तान्त्रिक धर्म' वास्तव में 'वैदिक कर्मकाण्ड' का ही विकसित स्वरूप है। 'पंच-तत्वों' के द्वारा जो उपासना-क्रम इसमें विहित माना गया है, वह 'वैदिक कर्मकाण्ड' के अनुकूल है, परन्तु वास्तविक पथ से विचलित हुए तान्त्रिकों एवं तन्त्र-विरोधियों ने 'पंच-मकार' को आगे करके लोगों के मन में भ्रम उत्पन्न कर दिया है। यही कारण है कि लोग 'तन्त्र' का नाम सुनते ही अनर्गल बातें करने लगते हैं। महाभारत युद्ध के बाद से बौद्ध-धर्म के प्रारम्भ होने तक अर्थात् करीब दो हजार वर्ष तक भारत में तन्त्र-धर्म की ही प्रबलता रही है। रामायण और महाभारत में भी तान्त्रिक उपासना का पूर्ण समर्थन किया गया है। जैन-ग्रन्थों में भी तन्त्र शास्त्र की "रहस्य-पूजा" का उल्लेख आया हे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि तन्त्र-शास्त्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और अति प्राचीन भी। वास्तव में 'तन्त्र' का महत्व उसकी 'साधना' की विधि में है। वह 'साधना' की विधि मात्र उपासना, पूजा, प्रार्थना, स्तवन या अपने इष्ट के समक्ष दुखड़ा रोने या अपने कर्मों पर पश्चाताप से नहीं है बल्कि वह साधना– पुरुष और प्रकृति को एक करने की क्रिया है। यह देह के भीतर 'पुरुष-तत्व' और 'मातृ-तत्व' का संयोग करती है और सगुण को निर्गुण करती है।

‘तान्त्रिक-साधना’ का उद्देश्य है– ‘स्वराट्’ को ‘विराट्’ में मिला देना। इसीलिए ‘कुण्डलिनी’ को जाग्रत करके ‘षट्चक्र’ भेदन किया जाता हे। यही कारण है कि ‘तन्त्र’ गर्व के साथ उद्घोषणा करता है कि **“सद्गुरु के निरीक्षण में अभ्यास करके देख लो। यदि शीघ्र ही कोई फल प्राप्त न हो तो छोड़ बैठना।”**

अन्ततः मैं यही कहूंगा कि ‘आगम-रहस्य’ के रूप में “आस्था प्रकाशन मन्दिर” का यह द्वितीय पुष्प आपको समर्पित है। इसी प्रकाशन से प्रकाशित प्रथम ग्रन्थ “षट्कर्म-विधान” आपको अच्छा लगा, आपने उसे सराहा– उसके लिए मैं आपका आभारी हूं। मां भगवती पीताम्बरा की यदि अनुकम्पा रही तो अतिशीघ्र ही तीसरा “श्री बगलामुखी-तन्त्रम्” ग्रन्थ आपके हाथों में होगा। आपके आशीष और शुभाकांक्षाओं की प्रतीक्षा में।

आपका अपना ....

सुमित गिरधरवाल

Contact -
Mob : 9410030994, 9540674788
Email : sumitgirdharwal@yahoo.com
Web : www.baglamukhi.info

आगम-रहस्य

(तन्त्रोक्त-साधनाएं)

प्रस्तुत ग्रन्थ में तन्त्र-साधना के जटिल रहस्यों को उजागर करते हुए पंचमकार, भैरवी चक्र-पूजा, के स्थूल अनुष्ठान, पूजा-चक्रानुष्ठान, आदि के साथ-साथ दीक्षा-तत्व, शाक्त-अभिषेक एवं पूर्णाभिषेक आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसके अतिरिक्त अनेकों तन्त्र-साधनाएं जैसे कि शाबर-मन्त्र, क्रोध भैरव, आर्द्रपटी महाविद्या, उर्वशी-साधना, धन्देश्वरी-साधना, यक्षिणी-साधना, त्रिपुर मदनाक्षी, अष्ट नागिनी तन्त्र, बगलामुखी, आसुरी दुर्गा कल्प, कार्तवीर्यार्जुन प्रयोग, विपरीत प्रत्यंगिरा प्रयोग एवं श्मशान-जागरण जैसी जटिल प्रक्रियाओं को बहुत ही सरल एवं प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिनके द्वारा प्रत्येक साधक वांछित साधना कर अपने अभीष्ट की प्राप्ति कर सकता है।

–योगेश्वरानन्द

अपनी बातें, अपनों से

अपने चारों ओर यदि आप दृष्टिपात करें तो वेद, गीता, रामायण और महाभारत जैसे ग्रन्थों को पढ़ने वाले, उनके विषय में जानने वाले अनेकानेक लोग आपको मिल जाएंगे। परंतु 'तन्त्र' विषय को पढ़ने वाले, उसके सम्बन्ध में गहन जानकारी रखने वाले, अथवा 'तान्त्रिक' आपको बहुत कम लोग मिलेंगे। इनमें ऐसे लोगों की संख्या भी काफी है, जो इस विषय में परिपक्व हैं, परन्तु वे स्वयं को गुप्त रखना अधिक पसन्द करते हैं, क्योंकि 'तन्त्र' के विषय में अधिकांश लोगों की यह धारणा है कि 'तन्त्र' जादू-टोने की विद्या है, पञ्चमकार की साधना है। उनके अनुसार यह विद्या एक गन्दी विद्या है, जिसमें शव-साधना और श्मशान आदि की क्रियाएं सम्पादित की जाती हैं। साधारण लोगों की बातें यदि हम छोड़ भी दें तो जो लोग ज्ञानी हैं, संस्कृत के उत्कृष्ट श्रेणी के विद्वान हैं, वे भी इसी अवधारणा के कारण ही 'तन्त्र-शास्त्रों' का अध्ययन करना उचित नहीं समझते। यदि एक सामान्य निष्कर्ष निकालें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि 'तन्त्र' और 'तान्त्रिक' के विषय में अधिकांश लोगों की धारणा कुल मिलाकर अच्छी नहीं है।

हमारे हिन्दू-शास्त्र चार भागों में विभाजित हैं– (1) श्रुति (2) स्मृति (3) पुराण और (4) तन्त्र। इनका विभाजन चार युगों के आधार पर किया गया है। सतयुग में वेद, त्रेतायुग में स्मृति, द्वापर में पुराण और कलियुग में तन्त्र-शास्त्र ही प्रभावी कहे गए हैं। इनमें श्रुति का स्थान निश्चय ही सर्वोच्च है, क्योंकि ये 'अपौरूषेय' हैं, अर्थात् इनका कोई रचयिता नहीं है। जबकि स्मृति, पुराण और तन्त्र– इन सबका आधार 'श्रुति' ही हैं। विद्वानों का यह भी मत है कि 'तन्त्र' पञ्चम वेद है और 'श्रुति' शब्द का व्यवहार भी कभी-कभी 'तन्त्र' के अर्थ में होता है। कहीं-कहीं 'तन्त्र' को 'निगम' भी कहा गया है।

सामान्यतः अनेक विद्वानों का यह मत है कि प्राचीन स्मृति-संहिताओं में उल्लिखित चौदह विद्याओं में 'तन्त्र-शास्त्रों' का कोई उल्लेख नहीं है, इसलिए यह विद्या प्राचीनतम नहीं है। यद्यपि 'अथर्ववेद' में आभिचारिक कर्मों का उल्लेख आया है, परन्तु अन्य लक्षणों का उल्लेख उसमें नहीं है। आद्य शंकराचार्य द्वारा भी इस उपनिषद् का एक

भाष्य लिखा गया है, जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि यह ग्रन्थ ईसा की सातवीं शताब्दी के पूर्व ही लिखा गया होगा। विद्वानों का यह भी तर्क है कि जिस समय 'ह्वेन सांग' और 'फाहियान'– जो चीनी यात्री भारत आए थे, उन्होंने तत्कालीन विभिन्न सम्प्रदायों का उल्लेख किया है, परन्तु तन्त्र-सम्बन्धी कोई उल्लेख नहीं किया। लेकिन ऐसा नहीं है। नौवीं और ग्यारहवीं शताब्दी में अनेकानेक 'बौद्ध-तन्त्रों' का अनुवाद तिब्बती में किया गया था और 'बौद्ध-तन्त्र', 'हिन्दू-तन्त्रों' पर ही आधारित हैं। इससे यह निश्चय होता है कि हिन्दू-तन्त्र-शास्त्रों की रचना उससे पूर्व हो चुकी थी। परन्तु चूंकि यह अत्यन्त गोपनीय विद्या है जो अधिकांशतः गुरु-मुखी है, इसलिए सम्भवतः इसका प्रचार-प्रसार बहुत ही कम था। 'ऋग्वेद' में भी यदि देखें तो 'तारा-विद्या' का परिचय हमें उसमें मिल जाता है। यह विद्या दश-महाविद्याओं में द्वितीय और तन्त्र की मुख्य शक्ति है। 'शिव' जो प्रधान पुरुष हैं, उनका नाम भी 'ऋग्वेद' में कई स्थानों पर आया है। इतना अवश्य है कि कहीं-कहीं शक्ति को 'प्रकृति' कहा गया है। 'यजुर्वेद' में भी शिवजी के अनेक नामों का उल्लेख मिलता है। यही कारण है कि 'तन्त्र' को 'वेदात्मक' कहा जाता है।

आज लोग तन्त्र-शास्त्रों में वर्णित पञ्चमकार की भर्त्सना करते हैं। परन्तु यह उचित नहीं है, क्योंकि 'वैदिक' यज्ञों में भी 'मिथुनी-करण' से आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि होना बताया गया है। 'शतपथ-ब्राह्मण' में स्थान-स्थान पर इसका उल्लेख आया है। उसके अनुसार– " 'मैथुन' अग्नि-होत्र है; 'मिथुनी-करण' संस्कार है; वे 'सदस' को गुप्त-भाव से आवृत किए हुए हैं। आवृत करने की क्रिया मिथुनी-करण है, इसलिए वह अवश्य ही गुप्त रूप से की जानी चाहिए। 'वे 'देवी' की पूजा तब तक नहीं करते, जब तक कोई 'देव' उसके 'पुं-अंग' के रूप में न हो'। 'वे एक छन्द-युगल का प्रयोग करते हैं, जिनमें से एक छन्द 'पुं' है, और दूसरा 'स्त्री', और ये दोनों एक साथ लिये जाने पर 'मैथुन' के प्रतीक माने जाते हैं।" इस प्रकार 'मैथुन' क्रिया को उन्होंने धार्मिक कृत्य माना है। इच्छानुसार 'पशु-मैथुन' पर उन्होंने अंकुश लगाया है।

वैदिकों द्वारा सम्पन्न किए जाने वाले 'हविर्यज्ञ' में 'सोत्रामणि'– जो यज्ञ का ही एक अंग है, में मादक पेय ग्रहण किए जाते थे। वैदिक शास्त्रों में स्पष्ट कथन किया

गया है कि 'सुरा' यज्ञ को पवित्र करती है और वह स्वयं भी पवित्र होती है (शतपथ-ब्राह्मण, सांख्यायन श्रौत सूत्र, कात्यायन आदि)। ऋषि 'कक्षिवान' सुरा की प्रशंसा करते हैं और उसे अभिलषित वस्तु बताते हैं। 'सोम' को उन्होंने अमरता दायक 'अमृत' कहा है, परन्तु उन्होंने मात्रा निर्दिष्ट करते हुए स्पष्ट कर दिया है कि अमुक 'यज्ञ' में इसे कितनी मात्रा में और कितनी बार ग्रहण किया जाए। वे पितरों, अश्विनी कुमारों और विनायक माता को भी 'सुरा' का अर्पण करते थे। वैदिक लोग अपने यज्ञों में देवताओं को 'पशुजन्य' और 'वनस्पतिजन्य' भोज्य पदार्थ भी अर्पित करते थे। आज भी ये लोग 'मैथुन', 'मांस', 'मद्य' और 'मुद्रा' को धार्मिक कर्मों में देवताओं के उपहार के रूप में ही ग्रहण करते हैं (अनुकल्प के रूप में)।

'मुद्राओं' का प्रदर्शन वे अपनी अंगुलियों से करते हैं और न्यास भी करते हैं। विघ्नों का शमन करने के लिए वे भी 'हुं' और 'फट्' जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं। 'शतपथ-ब्राह्मण' के अनुसार वैदिक लोगों द्वारा सरस्वती को 'वाग्देवी' कहकर 'पशुबलि' दी जाने की बात कही गयी है। महादेव को अग्नि के आठ स्वरूपों में से एक बताया गया है। परमानन्द की प्राप्ति के लिए वे 'रात्रि-देवी' की पूजा करते थे। इनकी पूजा रात्रि में ही की जाती थी, जिसमें 'रात्रि-सूक्त' का पाठ करना आवश्यक था। 'वेद' की प्रधान देवी 'सरस्वती' हैं, जिन्हें निघण्टु में 'नग्न' कहा गया है और उन्हें 'बाला स्त्री' का प्रतीक माना गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि वेद और तन्त्र-शास्त्रों में अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है। इस कथन को 'भागवत्' में स्पष्ट किया गया है–

"य आशु हृदय-ग्रन्थिं निर्जिदिर्षुः,
विधिनोपचरेद् देवं तन्त्रोक्तेन च.....।

अर्थात्, जो व्यक्ति शीघ्र ही अपनी हृदय-ग्रन्थि का छेदन करना चाहता है वह 'वेद'-विधान के साथ 'तन्त्रोक्त' विधान का समुच्चय करे।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि तन्त्र-शास्त्र भी अति पुरातन काल से विद्यमान है। जो कर्म इन शास्त्रों में उल्लिखित हैं, वेदों में और पुरातन प्रतिष्ठित ग्रन्थों में भी वह कर्म उल्लिखित हैं। लेकिन जो लोग तन्त्र-शास्त्रों में केवल पञ्चमकार, शव-साधना और श्मशानिक क्रियाओं का प्रदर्शन ही देखते हैं, वास्तव में उनका

दृष्टिकोण बहुत ही संकुचित है। वास्तव में तन्त्र-शास्त्र विपुल ज्ञान के भण्डार हैं। यदि हम आगम-शास्त्रों के प्रणेता भगवान सदाशिव के पांचों मुखों से निस्सृत तन्त्रों का अवलोकन करें तो हम भली-भांति जान सकते हैं कि वास्तव में तन्त्र क्या है? उनके ऊर्ध्व से निस्सृत तन्त्र का लक्ष्य जीव को जीवन-मरण के चक्र से मुक्ति प्राप्त करना है, जिसे 'मोक्ष तन्त्र' का नाम दिया गया है। पूर्वमुख से निस्सृत तन्त्र का उद्देश्य प्राणियों की विष से रक्षा करना है, जो 'गारुड़-तन्त्र' के नाम से जाना जाता है। उनके दक्षिण मुख से निकली धारा को 'भैरव-तन्त्र' का नाम दिया गया है, जिसमें शत्रुओं का दमन करने का विधान है। पश्चिम मुख से निकले तन्त्र-प्रवाह में दुष्ट-आत्माओं को दूर भगाने का संदेश दिया गया है, जो 'भूत-तन्त्र' के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार उनके उत्तर मुख से निस्सृत शब्दों को 'सम्मोहन-तन्त्र' का नाम दिया गया है, जिसमें सबको सम्मोहित करने के साधन बताए गए हैं। इस प्रकार 'तन्त्र' एक व्यक्ति के जीवन के समस्त पहलुओं को देखने एवं समस्त प्रकार के विघ्नों को दूर करने के उपायों का सुन्दर संकलन है। वास्तव में यह दुख का विषय है कि बौद्धों एवं जैन धर्मावलम्बियों के प्रभाव में आकर दुष्प्रचार के कारण यह सुन्दर मार्ग, विपरीत मार्ग समझा जाने लगा। वास्तव में 'तन्त्र' की गहराइयों में आकाश से लेकर पाताल तक सभी लोक समाहित हैं। कला, तत्व और भुवनों की भव्यता से ये ओत-प्रोत हैं।

शाक्त-सम्प्रदाय के तन्त्र-ग्रन्थों में मूलाधार से लेकर सहस्रार तक धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य का सम्मिश्रण है। कुलमार्ग की स्पष्ट मान्यता है कि सभी सामान्य धर्मों से वैदिक धर्म श्रेष्ठ है। वैष्णवमार्ग वेदों से भी उत्तम है, शैव-मत वैष्णव-मत से उत्तम है। शैव-मार्ग में वाम-मार्ग दक्षिण-मार्ग से भी उत्तम है। वाम की अपेक्षा सिद्धान्त-मत और भी उत्तम है, परन्तु सिद्धान्त-मत से भी उत्तम कौलमार्ग है और कौलमार्ग ही सर्वोत्तम है। उससे उत्तम कोई मार्ग नहीं है।

प्रत्यक्ष अथवा स्थूल पञ्चमकार साधना अष्ट-पाशों से युक्त अर्थात् पशुवृत्ति वाले लोगों के लिए नहीं बल्कि वीर साधकों के लिए है। लोग शक्ति को ही परम प्राप्तव्य मानते हैं, जबकि लक्ष्य यह नहीं है। परम प्राप्तव्य तो वह परब्रह्म है, जिसका यह जगत क्रीड़ा-स्थल है। प्रकृति के साक्षात्कार से ही परब्रह्म का ज्ञान होता है; बिना प्रकृति (स्त्री

शक्ति) के साक्षात्कार के ब्रह्मज्ञान असम्भव है। नित्या प्रकृति तीन रूपों में विद्यमान है—पहली सूक्ष्म रूप से देह में स्थित, दूसरी ज्योतिरूपा और तीसरी है स्त्री शक्ति, जो स्थूल रूप में हम सबके सामने हैं। इन्हीं तीनों रूपों की साधना के रहस्य को जानकर उन्होंने देह स्थित गुप्त विराट जगत् की खोज की और अन्तःपूजन की ओर उन्मुख हुए। ये पञ्चतत्व और चक्रार्चन अन्तःपूजन के बाह्य रूप हैं, जिनके अभाव में गुप्त ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती। बाह्यचक्र में सम्पादित किया जाने वाला प्रत्येक कर्म दैवीयुगल की आभा से युक्त मनुष्यरूप धारी चक्रेश्वर के लिए होता है, जो चक्र में स्व-शक्ति के साथ उपस्थित रहते हैं। साधक उनके समक्ष समर्पित होकर शक्ति का कृपा पात्र हो जाता है। यही वीराचार कहलाता है।

अनेकानेक योनियों में से सहस्त्रों जन्मों के उपरान्त जीव पुण्यों के संचय से भाग्यवश ही मनुष्य-जीवन को प्राप्त करता है। ऐसा दुर्लभ शरीर पाकर भी जिसने अपनी आत्मा को मुक्त नहीं किया, तो उससे दुर्भाग्यशाली कौन होगा? सर्वोत्तम मानव जीवन और इन्द्रिय-सौष्ठव प्राप्त करके भी जो आत्म-कल्याण नहीं कर सकता, वह निश्चय ही आत्मघाती होता है। चूंकि देह के बिना कोई पुरुषार्थ नहीं कर सकता, इसलिए देह-धन की रक्षा करते हुए ज्ञान-प्राप्ति तक मनुष्य को कर्मरत रहना चाहिए। सत्कर्मों और सद्ज्ञान के प्रकाशित होने पर निश्चय ही वह शिवत्व को प्राप्त हो जाता है। जप, होम, पूजन, तीर्थाटन आदि की आवश्यकता तब तक ही है जब तक मनुष्य को तत्वज्ञान नहीं होता। बस इसी तत्व-ज्ञान की प्राप्ति के लिए तान्त्रिक साधक, तन्त्र-मार्ग का, योगी योगाभ्यास का, और वेदान्ती उपनिषद्-उपदिष्ट मार्ग का आश्रय ग्रहण करते हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में इसी परब्रह्म के साक्षात्कार अथवा तत्व-ज्ञान-प्राप्ति के उद्देश्य में प्रयुक्त होने वाले कुछ साधनों और विधियों का प्रस्तुतीकरण किया गया है। साथ ही साथ तन्त्र का व्यवहारिक पक्ष भी "प्रयोगात्मक-अनुभाग" में प्रस्तुत किया गया है। विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण में 'तन्त्र-सार', 'कौलावली निर्णय', 'कुलार्णव तन्त्र', 'सर्वोल्लास तन्त्र', 'कौल कल्पतरु', 'महानिर्वाण तन्त्र' जैसे उत्कृष्ट तन्त्र-ग्रन्थों का आश्रय लेकर ही प्रस्तुत विषय का सम्पादन कार्य पूर्ण हो सका है, जिसके लिए मैं

इनके विद्वान लेखकों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। साथ ही प्रकाशक महोदय का भी मैं आभार व्यक्त करता हूं, जिनकी प्रेरणा से यह ग्रन्थ इतने सुन्दर कलेवर में, इतना शीघ्र आपको हस्तगत् हो सका है।

मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ सामान्य जन के मध्य तन्त्र-साहित्य के प्रति फैली भ्रान्ति को दूर करने में सहायक होगा और वे यह मानने के लिए विवश हो जाएंगे कि तन्त्र वास्तव में 'त्राण' पाने का एक सशक्त साधन है।

योगेश्वरानन्द

सम्पर्क

Email : shaktisadhna@yahoo.com
Website : www.yogeshwaranand.org
Mob : 9917325788 , 9540674788

अनुक्रम

विषय	पृष्ठ संख्या
दो शब्द	v–vii
अपनी बातें, अपनों से	ix–xiv
शुभाशंसा	xv–xxviii
भूमिका	xxix–xxxviii
सैद्धान्तिक अनुभाग	
1. आगम-रहस्य एवं सार्थकता	3–18
2. कौलाचार	19–26
3. तन्त्र का आधार एवं अधिकार	27–36
4. पंचमकार का रहस्य : मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा, मैथुन	37–54
5. भैरवी चक्र-पूजा-रहस्य (स्थूल अनुष्ठान)	55–64
6. रहस्य-पूजा (चक्रानुष्ठान)	65–100
प्रथम चरण, गुरुमण्डल वन्दना, काली-वन्दना, श्रीकुल साधकों के लिए ध्यान, कालीकुल-साधकों के लिए ध्यान, गुरु-स्तोत्र, स्त्रीगुरु-स्तोत्र, द्वितीय पात्र-वन्दना, तृतीय पात्र-वन्दना, चतुर्थ पात्र-वन्दना, कुलांगना स्तोत्र, पंचम पात्र-वन्दना, चक्राष्टक स्तोत्र, षष्टम पात्र-वन्दना, आनन्द स्तोत्र, सप्तम पात्र-वन्दना, बटुक-स्तव, अष्टम पात्र-वन्दना, उल्लास-स्तव, नवम् पात्र-वन्दना, मातंगी-स्तोत्र, दशम पात्र-वन्दना, एकादश पात्र-वन्दना, द्वादश पात्र-वन्दना, त्रयोदश पात्र-वन्दना, पूर्ण पात्र-वन्दना, किंकिणी-स्तोत्र।	
7. दीक्षा-तत्व	101–108
सद्गुरु के लक्षण, शान्त, दान्त, कुलीन, शुद्ध वेष, शुद्धाचार, सुप्रतिष्ठ, शुचिर्दक्ष, सुबुद्धिमान, आश्रमी, विनीत, ध्याननिष्ठ, मन्त्र-तन्त्र-विशारद, निग्रह-अनुग्रह-समर्थ। दीक्षा की अनिवार्यता।	

8. **शाक्त-अभिषेक एवं पूर्णाभिषेक** 109–124

9. **कौन सी साधना उत्तम है?** 125–128

व्यवहारिक अनुभाग

10. **शाबर मन्त्र** 131–142

शाबर मेरू-मन्त्र, तन्त्र-मन्त्र-यन्त्र-जागरण मन्त्र, आत्म- रक्षा-मन्त्र, देह रक्षा-मन्त्र, शत्रु-नाशक प्रयोग, मनचाही वस्तु मंगाना, लक्ष्मी-प्राप्ति, उच्चाटन प्रयोग, सामूहिक उच्चाटन 1-5, शत्रु के घर में पत्थर बरसाना, शत्रु पर टोना लगाना।

11. **आर्दपटी-महाविद्या (शत्रुहन्ता-प्रयोग)** 143–144

12. **क्रोध-भैरव-साधना** 145–160

महामण्डल-स्थापना, पूजन-विधि, षडंग-न्यास, आवाहन एवं दिग्बन्धन, मुद्राएं : महाशिव, शिखा, धूप, आवाहन, पूजन, शंख, कमण्डलु, ब्रह्म-पूजन, शुद्ध गौरी, आदित्य, राहू, नटेश्वर, उमा, प्रभादेवी, लक्ष्मी, शशीदेवी, सरस्वती, तिलोत्तमा, रम्भा; इन्द्र-पूजन-मन्त्र, अग्नि-मन्त्र, यम-मन्त्र, नैऋर्ति-मन्त्र, वरुण-मन्त्र, वायु-मन्त्र, कुबेर-मन्त्र, सोम-मन्त्र, ईशान-मन्त्र, सर्वेश्वरी सुन्दरी-मुद्रा, भूतनायिका, अग्नि, यम, नैऋर्ति, वारुणी, वायु, कुबेर, चन्द्र, ईशान, सिद्धाकर्षण मुद्राएं; ध्यान, क्रोध-मन्त्र, विधि एवं फल, कुछ विशिष्ट तथ्य, अन्य गोपनीय विधान, विज्ञानाकर्षण मन्त्र, देवता-ताड़न मन्त्र, चेतावनी।

13. **क्या वह सुन्दरी कोई अप्सरा थी?** 161–170

(उर्वशी साधना-रहस्य)

उर्वशी मन्त्र, साधना-विधि

14. **घोर दरिद्रता-विनाशक प्रयोग** 171–188

(धन्देश्वरी यक्षिणी-साधना)

मन्त्र एवं साधना, विधि, संकल्प, ध्यान, यन्त्र की प्राण-प्रतिष्ठा, विनियोग, आवाहन-मन्त्र, विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, हृदयादि न्यास, मन्त्रवर्ण-न्यास, कुबेर मन्त्र, कवच, न्यास, ध्यान, धनदा-स्तोत्र।

15. **यक्षिणी-साधना** 189–208

ऐसे कृत्य जो सभी यक्षिणियों की साधना में आवश्यक हैं, आवाहन, विसर्जन, सम्मुखीकरण, सानिध्यकारिणी, प्रमुखी-मुद्राएं, क्रोध-मन्त्र, सुरसुन्दरी-साधना, मनोहरा यक्षिणी-साधना, कनकवती-साधना, अनुरागिनी-साधना, वट-यक्षिणी-साधना, मेखला-साधना, विशाला-साधना, महायक्षिणी-साधना, कामेश्वरी-साधना, शंखिनी-साधना, चन्द्रिका-साधना, कालकर्णी यक्षिणी-साधना।

16. त्रिपुर मदनाक्षी-साधना 209–212

मन्त्र, साधना-विधि।

17. अष्ट नागिनी-तन्त्र 213–218

मन्त्र, साधना-विधि, मुद्राएं, विशेष।

18. श्री बगलामुखी : शत्रु-विध्वंसन प्रयोग 219–222

(अति गोपनीय-विधान)

प्रयोग-विधि, विलोम वल्गामुखि-मन्त्र।

19. अंगिरा ऋषि का महाप्रसाद 223–228

(आसुरी दुर्गा-कल्प)

आसुरी दुर्गा-मन्त्र, विनियोग, ऋष्यादिन्यास, षडंगन्यास, ध्यान, साधना एवं प्रयोग-विधि।

20. ऋण-हरण प्रयोग 229–232

मन्त्र, विनियोग, न्यास, ध्यान एवं स्तोत्र।

21. कार्तवीर्यार्जुन प्रयोग 233–236

धन प्राप्ति, वशीकरण, सर्वार्थ-सिद्धि, शत्रुनाश, सर्वलोक- वशीकरण, उच्चाटन, राजजन-वशीकरण, सर्वदुख- निवारण, बाधा-निवारण, असाध्य सिद्धि, सर्वरोग-निवारण, व्यापार- वृद्धि, राजा से कार्यसिद्धि, समस्त कार्यों की पूर्णता, कार्तवीर्यार्जुन-गायत्री, ध्यान, विनियोग, मन्त्र।

22. विपरीत प्रत्यंगिरा प्रयोग 237–244

ध्यान, विनियोग, न्यास, दिग्बन्ध, मन्त्र, विपरीत प्रत्यंगिरा-माला-मन्त्र, मातृका-सम्पुटित-स्तोत्र, काली प्रत्यंगिरा-स्तोत्र, विनियोग, न्यास, ध्यान, पाठ।

कुछ विशेष

23. पुत्रदा तन्त्र है, तब बांझ क्यों रहें? 245–248

24. श्मशान-जागरण की गोपनीय प्रक्रिया 249–256

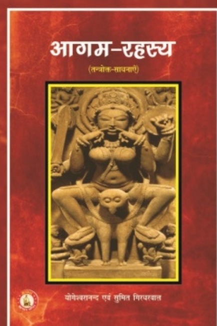
खापर-खुरी, श्मशान-बेरड़, प्रेत-डाली, प्रेत जागरण मन्त्र, श्मशान-जागृति-मन्त्र, प्रेत गिराने का मन्त्र, श्मशान-धक्का- मन्त्र, प्रयोग-विधि, चेतावनी।

25. कर्ण पिशाचिनी साधना 257–262

मन्त्र एवं विधान।

आगम-रहस्य

(तन्त्रोक्त-साधनाएँ)



'आगम' शब्द का अर्थ है– आगच्छति बुद्धिमारोहति यस्मादभ्युदयनिः श्रेयसोपायः स आगमः। अर्थात्, जिसके द्वारा इहलौकिक और पारलौकिक कल्याणकारी उपायों का वास्तविक ज्ञान हो वह 'आगम' शब्द से निरूपित होता है। वेदान्त का सिद्धान्त है कि "जीवो ब्रह्मैव नापरः" "जीव ही ब्रह्म है, दूसरा नहीं।" उसी प्रकार तन्त्र-आगमों का सिद्धान्त है– "आनन्दं ब्रह्मणो रूपम्" "आनन्द ही ब्रह्म का रूप है।" इसी प्रकार अनेकों श्रुतियां भी इसी आगम-सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है। वेदान्त के समान ही तन्त्र-आगमों के भी दार्शनिक सिद्धान्त हैं। वेदों में परमेश्वर परब्रह्म के रूप में हैं। वहां पूर्ण ब्रह्म कहते हैं "एकोऽहं बहुस्याम"– मैं अकेला हूं, बहुत हो जाऊं। तन्त्र-आगम में ब्रह्म को शिव नाम से जाना जाता हे। सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् भगवान परमशिव स्वयं संसाररूपी क्रीड़ा करने के लिए अपनी शक्ति को संकुचित करके मनुष्य-शरीर का आश्रयण करते हैं– "मनुष्यदेहमाश्रित्य छन्नास्ते परमेश्वराः"।

आस्था प्रकाशन मन्दिर
बागपत
Mob. 09410030994, 9540674788
Email. : asthaprakashanmandir@gmail.com
www.asthaprakashan.com

₹ 400/-
ISBN : 978-93-82171-67-6

If you want purchase this book please deposit Rs 400+100 (courier)= Rs 500/= in below a/c -

Sumit Girdharwal
Axis Bank
912020029471298.
IFSC Code – UTIB0001094 Branch – Baghpat (U.P.)

Send receipt along with your address to sumitgirdharwal@yahoo.com or whatsapp 9410030994